श्रम सुधारों की वास्तविकता

हमारे देश की जो गंभीर सामाजिक-आर्थिक समस्या है, वह रोजगार की है। इतना ही नहीं रोजगार की खराब गुणवत्ता इससे भी बड़ी समस्या रही है। अपर्याप्त और अनिश्चित आय एवं कामकाज की खराब परिस्थितियां ही इस समस्या का मुख्य कारण हैं। इसके पीछे देश के श्रम कानूनों में लचीलेपन का अभाव रहा है। कठोर श्रम कानूनों के चलते निवेशक पीछे हटते हैं, और औपचारिक क्षेत्र में रोजगार के अवसर कम होते जाते हैं। इस पूरी समस्या से निपटने के लिए एनडीए सरकार ने 2014 में कानून में सुधार का प्रयत्न किया था। इन कानूनों को चार संहिताओं में समेटकर सरकार ने इसे सुगम बनाने का प्रयास किया है। प्रस्तावित संहिताएं हैं -

1. वेतन संहिता
2. औद्योगिक संबंध संहिता
3. व्यावसायिक सुरक्षाए स्वास्थ्य और काम करने की स्थिति संहिताए और
4. सामाजिक सुरक्षा संहिता

सुधारों का प्रभाव -

यदि हम वी. वी. गिरी नेशनल लेबर इंस्टीट्यूट अंतरिम रिपोर्ट की बात करें, तो यह औद्योगिक संबंध संहिता पर अधिक फोकस करके लिखी गई है। इसकी अवधि 2004-2005 से 2018-19 तक की है। यह रिपोर्ट सुधारों को अपनाने वाले छः मुख्य राज्यों पर आधारित है। इनमें राजस्थान, महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, झारखंड और उत्तर प्रदेश शामिल हैं।

- रिपोर्ट के अनुसार श्रम सुधारों से बड़े उद्यमों में रोजगार की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है।

- श्रम सुधारों को अपनाने वाले पहले राज्य राजस्थान में ही बहुत कम लाभ हुआ है।

- 300 से ऊपर के श्रमिक रखने वाले उद्यमों में 2010-11 से 2014-15 के बीच श्रमिकों की संख्या 51.1% से बढ़कर मात्र 55.3% हो पाई है।

- इस रिपोर्ट में यह स्पष्ट ही नहीं हो पाया कि श्रमिकों को क्या लाभ हुआ है। केवल यह पता चलता है कि 2014 के बाद के ये सुधार बड़े उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए डिजाइन किए गए थे। उनमें भी रोजगार नहीं रहे।

कुल मिलाकर, आर्थिक विकास के सिद्धांत में मौलिक सुधारों की आवश्यकता होती है। अधिक सकल घरेलू उत्पाद के होने का अर्थ यह नहीं कि निचले स्तर पर भी अधिक आय हो रही है। इसलिए भविष्य में बेहतर गुणवत्ता वाली आजीविका पैदा करने में सक्षम बनाने के लिए रोजगार और श्रम नीतियों को चलाने वाले प्रतिमान को भी बदलना चाहिए।

'द हिंदू' में प्रकाशित अरूण मायरा के लेख पर आधारित। 19 अगस्त, 2022